1

प्रस्तावना

किसी भी समाज में सामाजिक संबंध उत्पादन के साधन पर निर्भर होते हैं। मार्क्स के अनुसार जब उत्पादन साधन में बदलाव आता है तो सामाजिक संबंधों में भी बदलाव आता है। इसे हम आधार और अधिसंरचना के रूप में भी समझ सकते हैं। जब आधार में बदलाव आएगा तब अधिसंरचना में भी बदलाव आएगा। भारत की आर्थिक व्यवस्था में भी आधार और अधिसंरचना की स्थिति को समझा जा सकता है। जब भारतीय समाज कृषि पर आधारित समाज था तब सामाजिक संबंधों में समरसता थी। सभी एक-दूसरे के दुख सुख में काम आते थे। लेकिन जैसे जैसे कृषि की प्रधानता कम होती गयी वैसे वैसे सामाजिक संबंधों में बदलाव होने लगा। भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार 1990 के दशक में उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (एल.पी.जी.) को अपनाने के साथ बदलने लगा। भारत के जीडीपी में मुख्य योगदान कृषि क्षेत्र को माना जाता है बावजूद इसके भारतीय अर्थव्यवस्था का ध्यान कृषि केन्द्रित होने के बजाय उद्योगों पर ध्यान केन्द्रित होने लगा।

भारत एक तरफ उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण को मजबूती प्रदान करने में लगा था वहीं दूसरी तरफ किसान आत्महत्या की खबरें आना शुरू हो गई। पहली बार किसान आत्महत्या की खबरों को सुर्खियों में लाने का काम पी. साईनाथ ने किया। 1990 के दशक में पी. साईनाथ ने किसान आत्महत्या की खबरों को मीडिया में लाना शुरू किया और फिर धीरे धीरे देश के कोने कोने से किसान आत्महत्या की खबरें आने लगी। पहली बार किसान आत्महत्या की खबरें महाराष्ट्र राज्य के विदर्भ क्षेत्र से आई उसके बाद आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरल, पंजाब, मध्य प्रदेश, छतीसगढ़ आदि से भी आने लगी।

किसान आत्महत्या

किसान आत्महत्या एक ऐसी स्थिति का परिणाम होता है जिसमें किसी किसान की खेती खराब हो जाती है या फसल नष्ट हो जाती हैं जिसकी वजह से वह बैंक या साहूकारों का कर्ज चुकाने में असमर्थ हो जाता है। वह किसान समाज और परिवार के तनाव से अवसाद में चला जाता है ऐसे में वह किसान खुद को मार डालना ही बेहतर समझता है और अंततः वह खुद आत्महत्या कर लेता है। नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो के अनुसार किसान आत्महत्या की श्रेणी में वे किसान आएंगे जिनके पास अपनी मिल्कियत की जमीन हो, आत्महत्या करते समय किसान कर्जदार रहा हो और कर्जदारी ही उसकी आत्महत्या का प्रधान कारण हो (NCRB,2015)। जबकि बड़ी संख्या में खेतिहर मजदूर भी

आत्महत्या करते हैं और उनकी भी स्थिति वैसी ही होती है जैसी किसानों की होती है बल्कि कभी कभी तो किसानों से भी बदतर स्थिति खेतिहर मजदूर की होती है। फिर भी सरकार ने अपनी नाकामियों को छुपाने के लिए खेतिहर मजदूर को किसान आत्महत्या की श्रेणी से बाहर कर दिया ताकि किसान आत्महत्या का आंकड़ा कम हो जाए और मुआवजा न देना पड़े। ऐसे में हम सरकार की नाकामियों को समझ सकते हैं। एक तो आत्महत्या को रोकने का ठोस प्रयास नहीं किया जा रहा है और अपनी जिम्मेदारियों से बचने के लिए एक बड़ी आबादी में की जाने वाली खेतिहर मजदूर की आत्महत्या को किसान आत्महत्या मानने से इंकार किया जा रहा है। इसका सीधा मतलब हम समझ सकते हैं कि इससे सरकार को बड़े स्तर पर दो फायदे हो रहे हैं। पहला विश्व स्तर पर किसान आत्महत्या के आंकड़ों में हुई कमी को दिखाकर अपनी अर्थव्यवस्था की खामियों को छुपाना और दूसरा मुआवजा की राशि में बचत करना। एक तरफ देश के कार्पोरेट के लिए सरकार इतनी मेहरबान है वहीं दूसरी तरफ किसानों के प्रति उदासीनता को देखा जा सकता है। वरिष्ठ पत्रकार हरवीर सिंह अपने आलेख में लिखते है कि सरकार द्वारा किसान आत्महत्या को रोकने की कोई कोशिश नहीं की जा रही है बल्कि उसे टालने की कोशिश हो रही है जिसकी वजह से लगातार किसान आत्महत्या की संख्या बढ़ रही है और नये इलाकों में भी इसका असर हो रहा है। जहां पहले किसान आत्महत्या की खबरे महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र और आंध्र प्रदेश से आती थी, वहीं अब इसमें कई नये इलाके जुड़ गए हैं। इसमें बुंदेलखंड जैसे पिछड़े इलाके ही नहीं, बल्कि देश की हरित क्रांति की कामयाबी में अहम भूमिका वाले हरियाणा, पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश जैसे राज्य शामिल है (सिंह, 2015)। यही नहीं इसके अलावा औद्योगिक और कृषि विकास के आंकड़ों में रिकॉर्ड बनाने वाला गुजरात क्षेत्र भी शामिल है। राजस्थान और मध्य प्रदेश के किसान भी अब आत्महत्या करने पर मजबूर हो रहे हैं क्योंकि अब खेती करना घाटे का सौदा हो गया है। बावजूद इसके सरकार अब तक इससे निपटने के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठा रही है लेकिन आंकड़ों की कलाबाजी जरूर कर कर रही है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के अनुसार वर्ष 1995 से 2013 के दौरान 3 लाख से अधिक किसानों ने आत्महत्या की। इस दौरान मध्य प्रदेश में लगभग 28 हजार किसानों ने आत्महत्याएँ की और आत्महत्या करने वाले प्रति पाँच किसानों में एक महिला किसान होने का देशव्यापी रिकार्ड मध्य प्रदेश के खाते में दर्ज है (वर्मा, 2015)। वर्ष 2004 में किसान आत्महत्या के 18,241 मामले दर्ज किए गए थे जोकि अब तक के सर्वाधिक मामले माने जाते हैं ठीक उसके 10 साल बाद वर्ष 2014 में 5,650 किसान आत्महत्या के मामले दर्ज किए गए जिसके आधार पर सरकार का मानना है कि किसान आत्महत्या के मामले में बहुत गिरावट आई है। लेकिन सच्चाई कुछ और है दरअसल किसान

आत्महत्या के मामले में गिरावट का कारण आंकड़ों का हेराफेरी है क्योंकि अब किसान आत्महत्या की पात्रता की श्रेणी अलग कर दी गई है जिसकी वजह से खेतिहर मजदूरों की आत्महत्या की एक बड़ी आबादी अलग हो गई है।

भारत को कृषि प्रधान देश होने में कई वर्ष लगे तब जाकर भारत कृषि प्रधान देश कहलाना शुरू हुआ। यहाँ इस बात का जिक्र करना इसीलिए जरूरी है कि भारत में 1990 के बाद से कृषि प्रधानता में धीरे धीरे कमी शुरू हुई है और अब स्थिति यह है कि हम कह सकते है कि भारत एक औद्योगिक एवं सेवाक्षेत्र प्रधान देश है। यहाँ हम यह भी देख सकते हैं कि भारत जब तक कृषि प्रधान देश था तब किसी औद्योगिक घरानों में आत्महत्या नहीं हुई लेकिन जैसे जैसे भारत औद्योगिक एवं सेवाक्षेत्र प्रधानता की तरफ बढ़ना शुरू हुआ किसान आत्महत्या होने लगी और इतनी संख्या में हुई कि लाखों का आंकड़ा पार कर चुकी है। जबकि अभी तक यह घोषित नहीं किया गया है कि भारत औद्योगिक एवं सेवाक्षेत्र प्रधान देश है। जिस दिन यह घोषित हो जाएगा उस दिन किसानों की स्थिति और भी बदतर हो जाएगी क्योंकि सरकारी नीतियाँ सिर्फ उद्योगों एवं सेवाक्षेत्र के लिए ही बनेगी।

किसान आत्महत्या के कारण

किसान आत्महत्या करने के कई सारे कारण हैं। जिनमें सूखे की वजह से खेती का बर्बाद हो जाना, शादी या बीमारी के लिए कर्ज लेना, साहूकारों से कई गुना ब्याज पर कर्ज लेना, फसल के बीज हेतु बाजार पर आश्रित होना तथा फसल में लागत का अधिक होना और फसल में नुकसान होना आदि ये प्रमुख कारण होते हैं। भारत के ज्यादातर छोटे किसान कर्ज लेकर खेती करते हैं। कर्ज वापस करने के लिए यह जरुरी है कि फसल अच्छी हो। हमारे देश में सिंचाई की सुविधा बहुत कम किसानों को उपलब्ध है। ज्यादातर किसान खेती के लिए वर्षा पर ही निर्भर रहते हैं अब ऐसे में यदि मानसून ठीक से न हो तो फसल पूरी तरह बर्बाद हो जाती है। साल भर खाने के लिए भी कुछ नहीं रहता, साथ में कर्ज चुकाने का बोझ भी दिन ब दिन बढ़ता जाता है जिससे किसान आत्महत्या करने के लिए बाध्य हो जाता है। किसानों के लिए खेती का खर्च लगातार बढ़ रहा है और आमदनी कम हो रही है। छोटे किसान आर्थिक तंगहाली में जी रहे हैं। किसान आत्महत्या के कारणों को जानने के लिए कई सारे सरकारी व गैर सरकारी अनुसंधान भी हुए हैं। *सेंटर फॉर ह्यूमन राइट्स एंड ग्लोबल जस्टिस* द्वारा जारी एक रिपोर्ट में यह भी दावा किया गया है कि दलित और महिला अधिकारों की अनदेखी करने से भी आत्महत्याएँ होती हैं। *एवरी थर्टी मिनट्स-फार्मर्स सुसाइड, ह्यूमन राइट्स एंड द एगरेरियन क्राइसिस इन इंडिया* नामक रिपोर्ट में भी कहा गया है कि किसानों की आत्महत्या का एक पहलू जातिगत और लैंगिक भेदभाव से जुड़ा हुआ है (New York: NYU School of Law, 2011)। भारत में

उदारीकरण की नीति के बाद खेती का तरीका भी बदला है खासकर नकदी फसलों का तरीका बदला है। सामाजिक-आर्थिक तंगी होने के कारण निचली जाति के किसानों के पास नकदी फसल उगाने के लिए न ही तकनीकी जानकारी होती है और न ही उतने पैसे होते हैं जिसकी वजह से सीमांत अथवा छोटे किसान कर्ज में डूब जाते हैं। उक्त रिपोर्ट के अनुसार नीची जाति के किसान और उनका परिवार जमीन की मिल्कियत के मामले में भी भेदभाव भरी नीतियों का शिकार होता है। जिन किसानों के पास अपनी जमीन की मिल्कियत नहीं होती उन्हें आधिकारिक आंकलन में किसान नहीं माना जाता है और परिवार के मुखिया की आत्महत्या की दशा में उसका परिवार किसान ना माने जाने के कारण सरकारी मुआवजे और राहत से वंचित हो जाता है। रिपोर्ट में यह कहते हुए कि भारत में तकनीकी तौर पर मिल्कियत से वंचित किसानों की एक बड़ी तादाद(मसलन महिला, दलित और आदिवासी) रहती है और भारत सरकार के नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो के आंकड़े किसान-आत्महत्या की सामाजिक सच्चाइयों को छुपाते हैं, किसान-आत्महत्या से जुड़े जातिगत-लिंगगत भेदभाव के पहलू की तरफ ध्यान दिलाते हुए भारत सरकार से अपील की गई है कि वह अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संधियों का हस्ताक्षरी होने के नाते इस मामले में रोकथाम, जांच और समाधान के लिए समुचित कदम उठाये। भारत में खेती उदारीकरण की नीतियों के बाद गुजरे दो दशक से वैश्विक बाजार की शक्तियों के असर में है। खेती का खर्चा बढ़ा है लेकिन किसान की आमदनी कम हुई है। छोटे किसान आर्थिक तंगहाली की सूरत में कर्ज के दुष्चक्र में पड़े है। जिस साल फसल खराब हो जाती है, उस साल उन्हें खेती की लागत भी वसूल नहीं हो पाती, कर्ज चुका पाना मुश्किल होता है जिसकी वजह से कई किसान आत्महत्या करने के लिए मजबूर हो जाते हैं। भारतीय रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर रघुराम राजन ने भी किसानों की आत्महत्याओं को गंभीरता से लेने के लिए आगाह करते हुए कहा था कि देशभर के छोटे व सीमांत किसानों को औपचारिक वित्तपोषण सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए क्योंकि यह एक जटिल मुद्दा है। कृषि लागत एवं मूल्य आयोग (सीएसीपी) ने पंजाब में कुछ केस स्टडी के आधार पर किसान आत्महत्याओं की वजह जानने की कोशिश की थी इसमें सबसे बड़ी वजह किसानों पर बढ़ता कर्ज़ और उनकी छोटी होती जोत बताई गई थी। इसके साथ ही मंडियों में बैठे साहूकारों द्वारा वसूली जाने वाली ब्याज की ऊंची दरें भी बताई गई थीं। लेकिन यह रिपोर्ट भी सरकारी दफ़्तरों में दबकर रह गई है। असल में खेती की बढ़ती लागत और कृषि उत्पादों की गिरती क़ीमत किसानों की निराशा की सबसे बड़ी वजह है (सिंह, 2015)। नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो प्रत्येक साल किसान आत्महत्याओं के कारणों को जारी करता हैं। वर्ष 2014 के रिपोर्ट में किसान आत्महत्या के प्रमुख कारणों को इंगित

करते हुए बताया गया है कि जिसे हम नीचे दिए गए चित्र में देख सकते हैं-(2014 में किसान आत्महत्या के प्रमुख कारण)

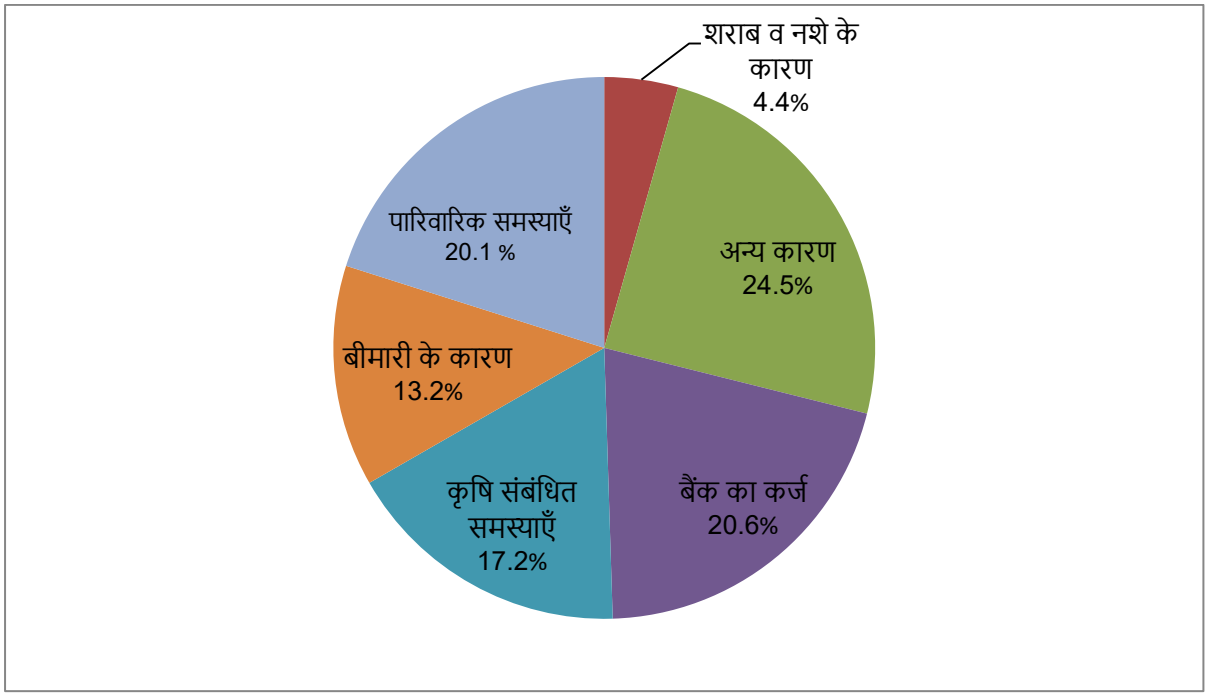

प्रस्तुत चित्र के माध्यम से हम देख सकते हैं कि वर्ष 2014 में 5,650 किसानों ने आत्महत्या की थी। जिनमें 4.4 प्रतिशत किसानों ने शराब व नशे की आदतों की वजह से आत्महत्या की, 24.5 प्रतिशत किसानों ने अन्य कारणों से आत्महत्या की, 20.6 प्रतिशत किसानों ने बैंक का कर्ज नहीं चुका पाने की असमर्थता में आत्महत्या की, 17.2 प्रतिशत किसानों ने कृषि संबंधित समस्याओं के कारण आत्महत्या की, 13.2 प्रतिशत किसानों ने बीमारी के कारण आत्महत्या की तथा 20.1 प्रतिशत किसानों ने पारिवारिक समस्याओं के कारण आत्महत्या की थी (NCRB, 2014)। नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो द्वारा प्रस्तुत कारणों पर निश्चित संदेह होता है। प्रस्तुत कारणों में एक बड़ा हिस्सा 24.5 प्रतिशत वाला भाग जिसमें अन्य कारण का उल्लेख किया गया है वो अन्य कारण क्या हो सकते हैं? जयंत वर्मा के अनुसार भारत में किसानी के संकट के पीछे मुख्य रूप से तीन कारण हैं, पहला कारण खेती किसानी में लागत अधिक लगना और इसके अनुपात में मूल्य कम प्राप्त होना, दूसरा कारण कृषि ऋण पर बैंककारी विनियमन अधिनियम की धारा -21(क) एवं तीसरा कारण सकल घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र की हिस्सेदारी को निरन्तर घटाया जाना (वर्मा, 2015)।

किसानों की बदहाली और आत्महत्याओं के लिए सरकार की दोषपूर्ण नीतियां जिम्मेदार हैं। कृषि अर्थव्यवस्था के जानकारों का कहना है कि हालात ऐसे भी बुरे नहीं है कि सरकार इसे नियंत्रित ना कर पाए लेकिन सरकार में इच्छाशक्ति का अभाव ज्यादा देखने को मिलता है। किसानों के लिए

जो सुविधाएं या सब्सिडी मिलती है वह काफी नहीं होती है अक्सर सरकारी सुविधाओं का लाभ सिर्फ बड़े किसानों को ही मिल पाता है। समृद्ध किसानों की सब्सिडियों को रोक कर छोटे, मझोले किसानों को मदद दी जाए तो काफी हद तक किसानों की समस्याएँ रोकी जा सकती है। बेहतर ऋण व्यवस्था, दोष मुक्त फसल बीमा और सिंचाई प्रणाली में सुधार लाकर सरकार किसानों की स्थिति में सुधार ला सकती है। इस साल भी महाराष्ट्र, ओडिशा, तेलंगाना, कर्नाटक, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, झारखंड और राजस्थान सूखे की समस्या से जूझ रहे हैं। ऐसे में आत्महत्या के बढ़ने की आशंका जताई जा रही है।

किसान आत्महत्या पर प्रस्तुत किए गए कुछ महत्वपूर्ण रिपोर्ट

एक महत्वपूर्ण अध्ययन प्रो. राधाकृष्ण की अनुसंशा में किया गया है जिसे रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया, मुंबई द्वारा "*REPORT OF THE INTERNAL WORKING GROUP TO EXAMINE THE RECOMMENDATIONS OF THE RADHAKRISHNA EXPERT GROUP ON AGRICULTURAL INDEBTEDNESS" नाम से* प्रकाशित किया गया है (Radhakrishna, 2008)। इस अध्ययन के अनुसार 'कृषि ऋणग्रस्तता किसान आत्महत्या के मुख्य कारण नहीं हैं बल्कि कृषि में ठहराव, विपरण में जोखिम, विस्तार प्रणाली का पतन, संस्थागत वेक्यूम का बढ़ना और आजीविका के अवसरों की कमी इसके प्राथमिक कारण हैं'। इस रिपोर्ट के अनुसार कृषि करने पर मिलने वाले परिणामों की वजह से किसान कर्ज चुकाने में सक्षम नहीं होते हैं इसलिए किसान आत्महत्या के लिए मजबूर होते हैं। इस अध्ययन द्वारा महत्वपूर्ण सुझाव दिए गए हैं। इसी क्रम में एक और महत्वपूर्ण अध्ययन टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्स द्वारा भी किया गया है (tiss, 2005) यह अध्ययन रिपोर्ट के रूप में 2005 में महाराष्ट्र सरकार को सौंपी गई थी। इस रिपोर्ट के अनुसार आत्महत्याएँ जमीन वाले लोगों में ज्यादा और भूमिहीनों में कम है। ऋण और बेबसी का चक्र परिवार का मुखिया होने के कारण आत्महत्या के लिए प्रेरित करता है। किसान ऋण चक्र चुकाने के लिए भूमिहीन हो जाते हैं। इन सभी प्रतिबद्धता में मध्यम और बड़े स्तर के जमीन मालिक शामिल हैं जो बड़े स्तर पर बिना चुकाए गए कर्ज से प्रभावित हैं। सभी किसानों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य उपलब्ध नहीं है खास कर छोटे और सीमांत किसानों के लिए। किसानों की आत्महत्या के कई कारणों को बताया गया है जिसमें से एक कारण फसल को दोहराया जाना विफलता का कारण है। इसके अलावा उत्पादन की बढ़ती लागत को पूरा करने की असमर्थता इसी के साथ साथ बेटी की शादी से लेकर पानी की उपलब्धता तक किसान की ऋण राशि बढ़ती जाती है। इन्दिरा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ

डेवलपमेंट रिसर्च द्वारा भी एक अहम रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी। जिसमें 109 गाँवों में 116 आत्महत्या के मामलों का अध्ययन किया गया था। मुख्य रूप से वर्धा, वाशिम और यवतमाल में अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन के अनुसार इन जिलों में किसानों की कपास की फ़सल के मूल्य खोल दिए गए थे। इन जिलों में 2004 में फ़सल के लिए वर्षा और पानी की बहुत भयंकर समस्या पैदा हुई थी। हालांकि उस समय लगभग सभी जगहों में सूखे की कमी देखने को मिलती है। उस समय कपास की कीमतों में काफी गिरावट आई। बीज, कीटनाशक और उर्वरक में लागत अधिक करनी पड़ी जबकि जब फ़सल तैयार हुई तब लागत भी निकालना मुश्किल हो गया था। इस रिपोर्ट में किसानों की स्थिति के बारे में लिखा भी गया है कि किसान कर्ज में ही जन्म लेता है और उसी कर्ज में मारता भी है। स्वतन्त्रता के बाद भी किसानों की यह स्थिति है। यह रिपोर्ट बताती है कि यदि विश्लेषण करके देखा जाय तो पता चलता है जहां किसान सफ़ेद सोना उगा रहे हैं वहीं सबसे ज्यादा किसान आत्महत्याएँ हो रही हैं। कपास एक जोखिम भरा उद्यम है। कृषि में ज्यादा लागत के कारण भी किसानों को परेशानी झेलनी पड़ती हैं। किसान आत्महत्या के कई कारण बताए गए हैं। किसानों को ऋणदाताओं के कर्ज का दबाव रहता हैं जिसकी वजह से यदि वह कर्ज देने में असमर्थ होता है तभी आत्महत्या का कदम उठाता है। जब आर्थिक स्थिति बहुत ही दयनीय होने लगती है तब किसान सामाजिक संबंधों से अलग होने लगते हैं सामाजिक यान्त्रिकी की कमी होने लगती हैं ऐसी परिस्थितियों में किसान खुद को असहाय और मजबूर महसूस करने लगते हैं। हालांकि इस तरह की स्थितियों को ध्यान में रखते हुए पुनर्वास पैकेज भी चलाए गए। कुछ प्रोग्राम केंद्र सरकार द्वारा चलाए गए तो कुछ राज्य सरकार द्वारा भी। इस रिपोर्ट में योजनाओं का भी जिक्र किया गया है। यह योजनाएँ यदि सही से लागू की जाए तो किसान आत्महत्या को काफी हद तक रोका जा सकता है। रिपोर्ट के निष्कर्ष में कहा गया है कि किसानों के उत्थान के लिए केंद्र सरकार और वित्तीय संस्थाओं द्वारा एक संयुक्त पहल की आवश्यकता है। किसानों की कृषि उत्पादकता में सुधार के लिए समय समय पर ऋण के माध्यम से पर्याप्त समर्थन मिलता है जिससे वह कृषि उत्पादकता में सुधार कर सकती हैं। रिपोर्ट के निष्कर्ष के रूप में कुछ सुझाव भी दिए गए हैं। जैसे- किसानों को स्वयं सहायता समूह बनाना चाहिए जिससे काश्तकारों, मिलकर खेती करने वालों किसानों और कृषि श्रमिकों को बैंकों के माध्यम से माइक्रो क्रेडिट मिल सके। किसानों को खेती के कार्यों के साथ साथ खेती से संबंधित पूरक व्यवसाय करने चाहिए। जैसे डेयरी, मछली पालन, मुर्गी पालन आदि। बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार किसानों को फसलों का विविधिकरण/ फसल रोटेशन करते रहना चाहिए। किसानों को कृषि कार्य से अलग गैर कृषि कार्यों से भी जुड़ना चाहिए। किसानों को बाजार में उनकी मेहनत का लाभकारी मूल्य मिलना चाहिए। इस तरह यह रिपोर्ट अपने आंकड़ों के साथ साथ सुझाव भी देती है।

जुलाई, 2008 में एक रिपोर्ट "*FARMER'S SUICIDE and DEBT WAIVER An ACTION PLAN for AGRICULTURAL DEVELOPMENT OF MAHARASHTRA"*नरेंद्र जाधव द्वारा महाराष्ट्र सरकार को सौंपी गई थीं (Jadhav, 2008)। इस रिपोर्ट में विभिन्न रेपोर्टों पर चर्चा करते हुए अपनी बाते रखने की कोशिश की गई है। महाराष्ट्र में हो रही किसान आत्महत्या के बारे में सात स्टडी ग्रुप द्वारा अध्ययन किया जा चुका है। जिसमें Indira Gandhi Institute of Development Research (IGIDR), the Planning Commission, Tata Institute of Social Sciences (TISS), Yashwantrao Chavan Academy of Development Administration (YASHADA), Government of Maharashtra (Farmers' Suicide in Maharashtra: An Overview, Dr. S.K. Goyal) और Dr. Swaminathan Committee शामिल है। इन सभी समितियों द्वारा किया गया अध्ययन काफी महत्वपूर्ण है जिसका जिक्र भी किया गया है। इस अध्ययन में यह भी बताया गया है कि 1997 से 2005 के दौरान 1, 50,000 किसानों ने आत्महत्या की है जिसमें 90,000 आत्महत्याएँ महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और मध्य प्रदेश में हुई है। किसान आत्महत्या की दर देखते हुए यह बताया गया है कि प्रत्येक 30 मिनट में एक आत्महत्या होती है। इसमें विभिन्न लोगों द्वारा किसान आत्महत्या के बारे में लिखे गए आलेखों का वर्णन किया गया है। इसी क्रम में पी. साईनाथ द्वारा किए गए कार्य का भी जिक्र किया गया है। साईनाथ ने कहा है कि महाराष्ट्र किसानों का कब्रिस्तान है। 2001 की जनगणना के अनुसार महाराष्ट्र राज्य के जनसंख्या 9.67 करोड़ थी। शेष तीन राज्यों आंध्र प्रदेश 1.57 करोड़, कर्नाटक 5.27 करोड़, मध्य प्रदेश 8.1 करोड़ थी। इसके आधार पर कह सकते हैं कि इस राज्य में किसान आत्महत्या की संख्या भी ज्यादा होगी। इसी के आगे इस शोध में बताया गया है कि किसान आत्महत्या एक बड़ी संख्या में महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र में हुई है। इसके अलावा 33 जिलों में से 6 जिलों का आंकड़ा जोड़कर देखा जाए तो पता चलता है कि विदर्भ के 6 जिलों में से सबसे ज्यादा किसान आत्महत्याएँ हुई हैं। जिसमें अमरावती, अकोला, यवतमाल, बुलढाणा, वाशिम और वर्धा आते हैं। इस अध्ययन में आत्महत्या के कारणों का अध्ययन करने पर तीन ऐसे कारण आए हैं जिनके तीन ग्रुप बनाए गए हैं जैसे ऋणग्रस्तता, पारिवारिक विवाद तथा लत और स्वास्थ्य से संबंधित समस्या। इस तरह इस अध्ययन में इन्हीं तीन कारणों के इर्द गिर्द बातें की गई हैं। बैंक और साहूकारों के निरंतर दबाव के कारण किसानों को मानसिक कष्ट अधिक होने लगता है। वह अपनी कमजोरी और हताशा के साथ समझौता नहीं कर पाते हैं और आत्महत्या करने के लिए मजबूर हो जाते हैं। इस अध्ययन में farmers suicide prevention packages: An evaluation नामक शीर्षक में

किसानों के लिए लागू किए गए पैकेज के सूत्रीकरण और लागू करने के बारे में बात की गई है। इसके बारे में कहा गया है कि आदर्श रूप में तो इस पैकेज के संतुलित मिश्रण से भी किसान आत्महत्या की रोकथाम के लिए किसानों को तत्काल और प्रत्यक्ष राहत मिलेगी। लेकिन ऐसे परिणाम देखने को नहीं मिलते हैं। इसमें आगे कहा गया है कि किसान आत्महत्या के लिए भले ही दीर्घकालिक उपाय किए जा रहे हैं। लेकिन सबसे ज्यादा जरूरी हैं कि तत्काल तथा प्रत्यक्ष राहत देने वाली योजनाओं को लागू किया जाए। यह पैकेज किसानों के मन में भविष्य में विफल होने का विश्वास पैदा करते हैं। इन पैकेज को दिखावा और सरकारी तंत्र की विफलता के रूप में देखा जा सकता है। अप्रैल, 2008 में प्रधानमंत्री द्वारा 3 साल के पैकेज को 21 महीने में पूरा किया गया था। इसके क्रियान्वयन के बारे में बताया गया है कि इस पैकेज का एक समान दर तक क्रियान्वयन किया गया है। लगभग 58 प्रतिशत क्रियान्वयन की उम्मीद की गई थी और वास्तव में 75 प्रतिशत से अधिक इसका क्रियान्वयन किया गया। इस शोध के अनुसार इस पैकेज का क्रियान्वयन संतोषजनक था। इसी तरह इस शोध में ऋण माफी से संबंधित मुद्दों को भी शामिल किया गया है। कृषि ऋण माफी और ऋण राहत योजना 2008 के कुछ मुद्दो का जिक्र किया गया है। वित्त मंत्री द्वारा 2008 में इस योजना की शुरुआत की गई। यह योजना भारतीय इतिहास की एक महत्वकांक्षी योजना थी। इस योजना में राष्ट्रीय स्तर पर 71,680 करोड़ और महाराष्ट्र राज्य के लिए 9,896 करोड़ (13.8%) खर्च किए गए। महाराष्ट्र के अनुपात को देखते हुए जनसंख्या के बड़े हिस्से को इसका लाभ मिला होगा इसकी संभावना जताई गई है परंतु इसका खास परिणाम देखने को नहीं मिलता है। इसी तरह इस शोध में किसानों के सामने आने वाली कठिनाइयों के बारे में भी चर्चा की गई है। इस शोध के अनुसार महाराष्ट्र राज्य की विकास दर में हाल के वर्षों में राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद के हिसाब से अधिक रही है। इसी तरह 2007-2008 में महाराष्ट्र की प्रति व्यक्ति आय राष्ट्रीय स्तर से 40 प्रतिशत अधिक थी। इस हिसाब से देखा जाय तो महाराष्ट्र राज्य की अच्छी स्थिति होनी चाहिए परंतु क्या वजह है कि किसान आत्महत्या आज भी महाराष्ट्र राज्य में ही ज्यादा होती है? इस शोध में यह भी कहा गया है कि महाराष्ट्र के कृषि क्षेत्र के लिए अधिक कायाकलाप करने की आवश्यकता है। शोध में कृषि सुधार के लिए बहुत से उपाय भी दिए गए हैं। यह शोध इसलिए उपयोगी है क्योंकि यह महाराष्ट्र राज्य में किसान आत्महत्या से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर जानकारी प्राप्त कराता है। खासकर विदर्भ क्षेत्र की समस्याओं पर प्रकाश डालता है। साथ साथ किसान आत्महत्या से संबंधित योजनाओं के निर्माण तथा क्रियान्वयन का भी वर्णन करता है।